नारी साहित्य में सांस्कृतिक परिवर्तन

ए.शौकत अली

असोसियेट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग एस.डी.जी.एस कालेज,**हिन्दूपुर-515201**.जिला अन्न्तपुरम, आन्ध्र प्रदेश, भारत

सारांश

प्राचीन काल में गंगा, यमुना, मैत्रेयी, अत्री, अनसूया आदि स्त्रियोंका विधान इस बात का प्रमाण है की वैदिक काल में स्त्रियों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने का पूरा अधिकार था | वे अपने पति के कार्यों में बारबार हिस्सा लोती थी और उसी कारण अर्धांगिनी कहलाती थी| उस समय कोई भी यज्ञादी शुभकार्य अर्धांगिनी की उपस्थित के बिना सम्पन्न नही हो सकता था | भवन राम ने अश्वमेध यज्ञ करते समय सोने की सीता बनवाई थी | स्त्रियों की यहाँ गौरवपूर्ण स्थिति मुसलमानों के इस देश में आधिपत्य स्थापित करने से पूर्वतक चलती रही|

स्त्रियों पर जो भी चर्चाए हुईं वे पुरुषों ने किये चाहे वह सामाजिक सरोकारों के मद्देनजर हो या सहानुभूति से। स्त्री चरित्रों को लेकर जो भी चर्चाए हुईं वे पुरुषों ने किए | स्त्री चरित्रों को लेकर पुरुष रचनाकारों का एक अपना नजरिया और अपना आकलन था। जब नारीवाद नारे और आंदोलन के रूप में चर्चित नहीं था, तब भी नारीवादी लेखन किया गया है। रुकैया सखवत हसन की कहानी सुलताना का सपना देखें। बंग महिला सुमित्राकुमारी सिन्हा चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की महादेवी स्त्री को लेकर अपने समय की सोच पर या स्थितियों पर कोई बयान नहीं देतीं पर उस समय से उठाए गए एक स्त्री पात्र का जैसा रोंगटे खड़े कर देने वाला चित्रण वह करती हैं |

घृतकुम्भसमा नारी तप्तागारसमः पुमान। नारी घी का कुआँ है और पुरुष जलता हुआ अंगार। दोनों के संयोग से ज्वाला प्रज्वलित हो उठती है, यानी नारी और पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं। नारी के बिना पुरुष का कोई अस्तित्व नहीं। पुरुष के अभाव में नारी का कोई मूल्य नहीं। दोनों का सम्बन्ध अभिन्न अखण्ड और अनादि है। आदिकाल से लेकर आज तक का भारतीय इतिहास इस बात का साक्षी है कि नारी किस प्रकार जीवन के क्षेत्र में पुरुष की अभिन्न सहयोगिनी के रूप में अपने नारीत्व को दीपित करती आयी है। नारी के सहयोग के अभाव में पुरुष ने सदा एकाकीपन अनुभव किया है और जहाँ भी सहयोगिनी के रूप में नारी प्राप्त हुई है वहाँ उसने अभिनव से अभिनव सृष्टि की है।

मूल शब्द: शुभकार्य, नजरिया, सहयोग, अस्तित्व

प्रस्तावना

यत्र नार्यन्ते पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवाता
पत्रातास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला: किया |

जहाँ नारी की पूजा होती हैं वहाँ देवाना निवास करते हैं और जहाँ नारी की पूजा नहीं होती वहाँ

किसी भी फल की प्रापति नहीं होती | भारतीय इतिहास का प्रारम्भ वैदिक युग से होता है। वैदिक युग भारतीय संस्कृति का उज्वलतम युग था, उस युग में नारी का समाज में आदर था, वह पुरुषों के साथ ही जीवन के क्षेत्र में कन्धों से कन्धा मिलाकर कार्य करती थी। उसे पुरुष के समान अधिकार प्राप्त थे। गार्गी, मैत्रेय, विश्ववारा उस युग की ऐसी नारियाँ हैं, जिन्होंने अपनी प्रतिभा के बल पर ऋषियों का पद प्राप्त किया था।

भारतीय इतिहास में नारी :

कबीर ने नारी के संबन्ध में कुछ ऐसे चित्र प्रस्तुत किये जिससे उस युग में नारी भोग की वस्तु ही समझी जाती थी, उसके गौरवमय पक्षों को भुला दिया गया था। कबीर सन्त थे, उन्होंने जनता को नारी की वासनात्मक पक्ष की ओर देखने से सचेत किया। वैसे उन्होंने नारी के प्रति घृणा नहीं प्रदर्शित की। पतिव्रता नारियों की उन्होंने प्रशंसा की है और सबसे बडी बात तो यह कि स्वयं को राम की ?बहुरिया? माना है। सती कौ अंग, विरहणी, पतिव्रता आदि रूपों का सम्मान किया। सूर की राधा में विश्वभर की प्रेमिकायें मान मनुहार करती हैं। यशोदा में विश्व की माताओं की करुणाए वात्सल्य किसी को प्यार करने के लिये लहर उठती है। सूर ने गोपियों की तन्मयता एवं प्रेमासक्ति में हृदय की रागात्मक अनुभूतियों का सजीव चित्रण प्रस्तुत करके नारी जाति के गौरव को उन्नतिशील बनाया है।

तुलसी ने सीता के अतिरिक्त कौशल्या, मन्दोदरी और अनुसूया आदि नारी के आदर्श गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा की है और उन्हें समाज का गौरव सिद्ध किया है किन्तु जहाँ भी नारी उन्हें अपने वास्तविक पद से गिरती हुई दिखाई पडी है वहीं उन्होंने उसकी आघोर निन्दा की है। डॉ. माता प्रसाद गुप्त ने लिखा है कि प्रत्येक युग के कलाकार नारी-चित्रण में प्रायः उदार पाये जाते हैं। किन्तु नारी चित्रण में तुलसी बेहद अनुदा हैं, लेकिन उनका यह ख्याल गलत है जिस कवि ने सीता जैसी नारी का चित्रण कर उसे जगत् जननी का पद दिया; वह नारी जाति के प्रति निन्दनीय विचारधारा कदापि नहीं रखता था। फिर तुलसी को तुलसीदास बनाने वाली भी तो एक नारी ही थी – उनकी पत्नी रत्नावली, जिसने धक्के देकर उन्हें राम के वास्तविक महत्त्व से परिचित कराया था। तुलसी रत्नावली के इन शब्दों को कदाचित् क्यों न भूले होंगे –

अस्थि चरम मय देह मम, तासे जैसे प्रीति ।

ऐसी पृष्ठभूमि में आज विश्व की माँग है और वह माँग भारत पूरी कर सकता है। वह माँग है, शाँति की, प्रेम की, सुरक्षा की तथा संगठन की। आज के युग की सबसे बड़ी माँग है नवनिर्माण की, प्रस्तुत परिस्थितियों में आमूल परिवर्तन एवं क्राँति की। आज हम युग परिवर्तन के प्रहरी बनकर विश्व को शाँति का दीप दिखायेंगे, फिर से हमें अपने भारतीय ऋषि, मुनियों की परंपरा को जीवित करना होगा, फिर से धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, नैतिक एवं नैष्ठिक पुनरुत्थान की भावना को जन-जन में भर देना होगा। आज हमें भारतीय होने के नाते प्रत्येक नर–नारी को देश के नवनिर्माण में प्राणपण से जुट जाना होगा। इस युग परिवर्तनकारी आँदोलन में और जागरण की स्वर्णिम बेला में भारतीय नारी का प्रथम उत्तरदायित्व है कि वह इस दिशा में कदम उठाये। आज की नारी सजग है, वह स्वतंत्रता, धार्मिकता एवं मर्यादा की प्रहरी है। नारी के प्रति जो अत्याचार आज तक किया गया उसके लिए पुरुष समाज को प्रायश्चित करना होगा, अब कन्याओं को मूक पशु की भाँति बेचा न जा सकेगा। जरा कल्पना करिये उस वैदिक काल की जब घोषा, अपाला, गार्गी, मैत्रेयी जैसी महान रमणियाँ हुईं अनेक वेदमंत्रों का निर्माण करने वाली ऋषिकाएं हुईं, जहाँ देश पर और आन पर प्राण न्यौछावर करने वाली रणदेवियाँ हुईं। आज उन्हीं की

जन्मभूमि पर नारी पर किया जाने वाला अत्याचार क्यों? आज के युग में भारतीय नारी की शिक्षा का औसत सोचते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं और आश्चर्य होता है क्या यही उन ब्रह्मवादिनियों
की भूमि है? जो-जो अत्याचार आजतक नारी पर अबला समझ कर किये गये, चाहे उससे अंतरिक्ष फट पड़ा हो परंतु पुरुष का हृदय न पिगलसका।

आज की विकट परिस्थितियों में हर स्तर पर नारी को दु:ख सहना पढ रहा है, फिर चाहे वो गर्भ में या अपने बाल्य काल में ही क्यों ना हो। नारी को आज महज एक भोग की वस्तु भर बन कर रह गयी है। आज समाज का हर तबका इस स्थिति पर चिंतित है। हम भी इससे अछूते नहीं हैं। जन चेतना एवं जनसेवा के क्षेत्र में अग्रणी संगठन "मारवाड़ी युवा मंच" इस विषय पर अपनी सामाजिक जवाबदेहियों के तहत एक विस्तृत सारगर्भित परिचर्चा आयोजित करवाने का मानस बनाया है। "परिवर्तन" नारी उत्पीडन : कारण और निवारण) विषयक इस परिसंवाद में सम्बंधित कई क्षेत्रों के राष्ट्र स्तर के विद्वजन उपस्थित रहेंगे और अपने विचार रखेंगे। इस कार्यक्रम में जहाँ हम नारी की वर्त्तमान दशा और दिशा पर विमर्श करेंगे वहीँ इस दशा के परिवर्तन के लिए भी समाज का आह्वान करेंगे। इस कार्यक्रम में नारी सशक्तिकरण को ध्यान में रखकर उन महिलाओं और कन्याओं को पुरस्कृत भी किया जायेगा जिन्होंने ऐसी घटनाओं का विरोध किया और अपना सहस प्रदशित किया। सम्मान की कड़ी में ही उन परिवारों को चिन्हित कर सम्मानित करने का प्रयास किया जायेगा जिन परिवारों में सिर्फ 1 या 2 लड़कियां ही हैं और उसके बाद उन्होंने परिवार नियोजन का सहारा लेकर लड़कियों को स्वीकार किया है।
इस कार्यक्रम की सबसे महत्वपूर्ण पहल के रूप में छोटे बच्चों और उनके माता - पिता को ख्याति प्राप्त प्रशिक्षकों के द्वारा विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जायेगा ताकि उनमे सही गलत का बोध हो और विपरीत परिस्थितियों का सामना करने का साहस उत्पन्न हो सके। यह कार्यक्रम भी हम सबों के जीवन से सम्बंधित है अतः इस कार्यक्रम में आपकी उपस्थिति इस कार्यक्रम की सार्थकता को सिद्ध करेगी एवं आवश्यक पहलुओं पर आपके द्वारा दिया गए सुझाव इस विपदा से लड़ने में सहायक होगा।

मध्यकाल में नारी की स्थिति

इतिहास के प्रारम्भिक रूप को देखने से ज्ञात होता है कि शुरू से ही नारी परिवार का केन्द्र बिन्दु रही है। उन दिनों परिवार मातृसत्तात्मक था। खेती की शुरूआत तथा एक जगह बस्ती बनाकर रहने की शुरूआत नारी ने ही की थी, इसलिए सभ्यता और संस्कृति के प्रारम्भ में नारी है किन्तु कालान्तर में धीरे-धीरे सभी समाजों में सामाजिक व्यवस्था मातृ-सत्तात्मक से पितृसत्तात्मक होती गई और नारी समाज के हाशिए पर चली गई। आर्यों की सभ्यता और संस्कृति के प्रारम्भिक काल में महिलाओं की स्थिति बहुत सुदृढ़ थी। ऋग्वेद काल में नारी उस समय की सर्वोच्च शिक्षा अर्थात् बृहमज्ञान प्राप्त कर सकतीं थीं। ऋग्वेद में सरस्वती को वाणी की देवी कहा गया है जो उस समय की नारी की शास्त्र एवं कला के क्षेत्र में निपुणता का परिचायक है। अर्द्धनारीश्वर की कल्पना स्त्री और पुरूष के समान अधिकारों तथा उनके संतुलित संबंधों का परिचायक है। वैदिक काल में परिवार के सभी कार्यों और भूमिकाओं में पत्नी को पति के समान अधिकार प्राप्त थे। नारियां शिक्षा ग्रहण करने के अलावा पति के साथ यज्ञ का सम्पादन भी करतीं थीं। वेदों में अनेक स्थलों पर रोमाला, घोषाल, सूर्या, अपाला, विलोमी, सावित्री, यमी, श्रद्धा, कामायनी, विश्वम्भरा, देवयानी आदि विदुषियों के नाम प्राप्त होते हैं। उत्तरवैदिक काल में भी स्त्रियों की प्रतिष्ठा बनी रही। इसके अलावा शासन, सेना, राज्य-व्यवस्था में स्त्रियों के योगदान के प्रमाण मिलते हैं। प्राचीन भारत में महिलाओं की स्थिति से संबंधित दो विचार के सम्प्रदाय मिलते हैं। एक सम्प्रदाय के समर्थकों का कहना है कि महिलायें 'पुरूषों के बराबर' थीं, जबकि दूसरे सम्प्रदाय के समर्थकों की मान्यता है कि महिलाओं का न

केवल अपमान ही होता था बल्कि उनके प्रति घृणा भी की जाती थी। "वैदिक सूत्रों के आधार पर उक्त काल खण्डों में स्त्री की गौरवपूर्ण एवं सम्मानजनक स्थिति स्वीकार करते है"[1] तथा परवर्ती सूत्रों में उत्तरवैदिक काल से स्त्रियों की निम्नतर स्थिति के स्पष्ट संकेत मिलते हैं । नारी समाज का वह अंग है जो व्यक्ति और समाज के स्तर पर अनेक भूमिकाओं को एक साथ ही निर्वाहित करती है। एक ही समय में वह एक से अधिक रूपों में जीवित रहती है और इन विभिन्न रूपों में वह एक साथ ही माता, बहन, पुत्री, प्रेयसी, दोस्त तथा वेश्या तक हो जाती है। उपनिषदों में भी कहा गया है,-''सृष्टि की सम्पूर्ण रिक्तता की पूर्ति स्त्री से मानी गयी है।''[2] मानव जीवन के सर्वतोन्मुखी विकास में नारी की अहम भूमिका रही है। जिन्होंने बृहदरूपेण समाज का चतुर्दिक विकास किया है। नारी की स्थिति उसकी आर्थिक प्रगति राजनितिक सक्रियता तथा उसके वैचारिक आदर्शों से निरंतर प्रभावित होती रही है। महाभारत काल में नारी के अधिकार पहले जैसे नहीं रहे। वर्ण व्यवस्था में भी कठोरता आई तथा नारी घर-ग्रहस्थी तक सीमित रहने लगी। बहुपत्नी व्यवस्था और अनुलोम विवाह के कारण नारी उपभोग की वस्तु बनने लगी। तप, त्याग, नम्रता, धैर्य आदि पतिव्रत धर्म का पालन करना उनके प्रमुख लक्ष्य माने गये। पति के मनमाने अधिकार का ज्वलंत उदाहरण द्रौपदी और सीता बनी। किशोरियों को शिक्षा से वंचित रखा जाने लगा। बहु-विवाह एवं बाल विवाह होने लगे, विधवाओं की संख्या बढ़ने लगी। विधवा-विवाह पर प्रतिबंध लग गया। पतिव्रत धर्म सर्वोच्च बन जाने के कारण विधवा का जीवन नरक हो गया, परिणामस्वरूप सती प्रथा का जन्म हुआ।

''नारी सौन्दर्य की उदात्तता, उसके तीनों रूपों- माता, पत्नी और कन्या में भक्तिकाल के कवियों ने अंकित की है। ज्ञानमार्गियों के लिए माता परमात्मा स्वरूप भी है अथवा कहना चाहिए कि उन्होंने माता में परमात्मा की विशेष स्थापना देखी है।''[3] सन्तों और भक्तों ने अपनी वैराग्यपूर्ण वृत्ति से प्रेरित होकर उसे 'सर्पिणी' और 'भव-बन्धन' का मुख्य कारण बताया। तुलसी जैसे समन्वयात्मक दृष्टि सम्पन्न कवि ने उसे माता और जीवन की सच्ची सहधर्मिणी के रूप में भी चित्रित किया। मध्ययुग के वैभवपूर्ण भौतिक वातावरण में नारी के प्रति एक विशेष प्रकार के दृष्टिकोंण का आविर्भाव हो जाना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं थी। भारतवर्ष में नारी की निन्दा और प्रशंसा दोनों बातें पाई जाती हैं। एक ओर सन्तों ने उसे काम-स्वरूपा जानकर उसकी निन्दा की है, तो दूसरी ओर भारतवर्ष में ही यह भी कहा गया है कि जहां स्त्रियों का आदर होता है, वहां देवता विचरण करते हैं। स्त्री के सम्बन्ध में मीरा का दृष्टिकोंण अन्य भक्तिकालीन कवियों में एकदम अलग है। सामन्ती समाज व्यवस्था ने स्त्री को सिर्फ तीन नाम दिए हैं-पत्नी, रखैल एवं वैश्या और उसे सिर्फ दो रूपों में देखा है-देवी तथा दासी। मीरा ने स्त्री के इन सब परंपरागत रूपों को अस्वीकार किया है। मीरा की कविता में सामन्ती समाज और संस्कृति की जकड़न से बेचैन स्त्री-स्वर की मुखर अभिव्यक्ति हुई है। उनकी स्वतंत्रता की आकांक्षा जितनी अध्यात्मिक है, उतनी ही सामाजिक भी। आज स्त्री-विमर्श के बुलन्द नारे के बीच मीरा का व्यक्तित्व एवं उनका काव्य किस प्रकार प्रासंगिक हो सकता है, यह विचरणीय है। ''सूरदास ने माता यशोदा के मक्खन समान स्नेह, आत्मत्याग और निःस्पृह वात्सल्य का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह मधुरता के साथ उदात्त है।''[4] वहीं तुलसीदास ने ''माता को परमाभिवंधा कहा है, जिसका स्थान पिता की अपेक्षा अत्युच्च है।''[5] नारी हृदय कोमलता, दया, सहानुभूति और स्नेह की सजीव प्रतिमा है। कार्या, रूपों और स्थितियों के अनुसार नारी के अनेक नाम भारतीय साहित्य में प्रचलित है, जिससे नारी के विभिन्न स्वरूपों का बोध होता है। ''नर के धर्म वाली या नर के संबंध होने के कारण उसका 'नारी' नाम पड़ा। इस शब्द से सृष्टि के एक-एक प्राणी विशेष का रूप सामने आता है और यह भक्तिकाल में प्रायः उसी अर्थ में प्रयुक्त भी होता था, जिस अर्थ में आजकल साधारणतयाः 'मादा' शब्द का प्रयोग होता है।''[6] मध्यकाल में कन्या जन्म के अशुभ माने जाने के संकेत मिलते हैं। सदैव लड़कियां पैदा करने वाली स्त्री को

घृणा से देखा जाता था। स्त्री को कुछ सम्मान पुत्र की माता बनने पर मिलता था। परन्तु इस्लाम के भारत में आने के बाद सुरक्षा, विवाह, दहेज आदि प्रश्नों ने कन्या जन्म को सामाजिक अप्रतिष्ठा का विषय बना दिया। अतः कन्या शिशु हत्या की परम्परा प्रारम्भ हुई। स्त्रियों की सुरक्षा व अप्रतिष्ठा के प्रश्न ने कन्या शिशु हत्या के आंकड़ों में बृद्धि की। 'अमीर खुसरो' इसीलिए कहते हैं, ''मैं चाहता था कि तुम्हारा जन्म ही नहीं होता और यदि होता भी तो पुत्र के रूप में। कोई भाग्य का विधान नहीं बदल सकता, परन्तु मेरे पिता ने एक स्त्री से जन्म लिया और मुझे भी तो एक स्त्री ने ही पैदा किया था।''[7]

मध्यकालीन भारत में स्त्री शिक्षा के बारे में जानकारी अपर्याप्त है। यद्यपि इब्नबतूता लिखते हैं कि ''जब वह हानौर पहुँचा तो वहां उसने 23 ऐसे विद्यालय देखे जिनमें बालिकायें शिक्षा ग्रहण करतीं थीं। नगरों व बड़े घरानों की स्त्रियों के पढ़ने-लिखने के संकेत मिलते हैं किन्तु सामान्य परिवारों एवं ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा का स्तर नीचा था।''[8] ''भक्तिकालीन साहित्य में मीराबाई, गबरीबाई, दयाबाई, सहजोबाई का योगदान''[9] भक्तिकाल का साहित्य सृजन लोकभाषा एवं मातृभाषा में होने के कारण स्त्रियों को पढ़ने-लिखने की प्रेरणा मिली। इस काल में नारी की स्थिति और भी बदतर हो गयी। कुल के रक्त की शुद्धता, नारी के सतीत्व की रक्षा और हिन्दू धर्म की रक्षा के नाम पर नारी को ऐसे सामाजिक-धार्मिक बंधनों में जकड़ दिया गया कि वह पुरूष की छायामात्र होकर रह गई और उसका स्वतंत्र अस्तित्व लुप्त हो गया। इस काल में स्त्री-शिक्षा समाप्त हो गई। पर्दा-प्रथा और सती प्रथा यहां तक कि मादा-शिशु की हत्या भी होने लगी। उत्तर भारत की तुलना में दक्षिण भारत में विदेशी आक्रमणों का प्रभाव कम था, इसलिए वहां बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा और सती-प्रथा जैसी कुप्रथायें कम पनप सकीं। यद्यपि मध्यकालीन इतिहास में रजिया बेगम, चाँद बीबी, ताराबाई, अहिल्याबाई आदि वीरांगनाओं ने शासन संचालन में ख्याति प्राप्त की किन्तु इन चंद नारियों के उदाहरण से यह नहीं कहा जा सकता कि सामान्य स्त्री की स्थिति किसी भी तरह संतोषजनक थी। ''11वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही भारतीय समाज पर उसके आपसी मतभेद एवं फूट के कारण मुस्लिमों का आधिपात्य हो गया था। उनके प्रतिदिन के बढ़ते वर्चस्व के कारण संस्कृति रक्षा एवं मनु स्मृति के नाम पर नारी के स्वतंत्र अस्तित्व का न केवल पूर्णतयाः लोप हो गया वरन् उन्हें समाज की चाहरदीवारों में कैद कर दिया गया। लगातार आक्रमणों में भागीदारी, परिवार एवं समाज को सुरक्षा प्रदान करते रहने के कारण पुरूषों का गौरव बढ़ता चला गया।''[10] धीरे-धीरे स्थिति यह आयी कि सुविधा एवं सुरक्षा जुटाते रहने के कारण पुरूषों के वर्चस्व को समाज में मान्यता दे दी गई, नारियां मात्र भोग-विलास का पर्याय बन गयीं। उनका कार्य केवल सज-संवर कर पुरूषों की इच्छा पूर्ति करना अथवा उनके बच्चों की माँ बनकर उनकी देख-रेख करना रह गया। वे बाजार की एक बेजान वस्तु की भांति हो गईं जिनकी हर सांस पर दूसरों का अधिकार था।

संदर्भ ग्रन्थ

1- अग्रवाल, चन्द्रमोहन, भारतीय नारी: विविध आयाम, पृ- सं- 35, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा।

2- बृहदारण्यक, उपनिषद, 1/4/17

3- सूरसागर, पहला खण्ड, सं. नन्द दुलारे बाजपेयी, पृ. सं. 255 से 594 तक के विविध प्रसंग

4- अयोध्या काण्ड, दोहा, 56, चौ. 1

5- शर्मा, गजानन, प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी, पृ. सं. 42-43, रचना प्रकाशन, 45-ए, खुल्दाबाद, इलाहाबाद।

6- शर्मा, गजानन, प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी, पृ. सं. 42-43, रचना प्रकाशन, 45-ए, खुल्दाबाद, इलाहाबाद सं. 42-43

7- कस्तवार, रेखा, स्त्री चिन्तन की चुनौतियां, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2006, पृ. सं. 64

8- वही, पृ. सं. 64

9- वही, पृ. सं. 64

10- कौशिक, आशा, नारी सशक्तीकरण: प्रतिशत विमर्श एवं यथार्थ, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2004, पृ. 200